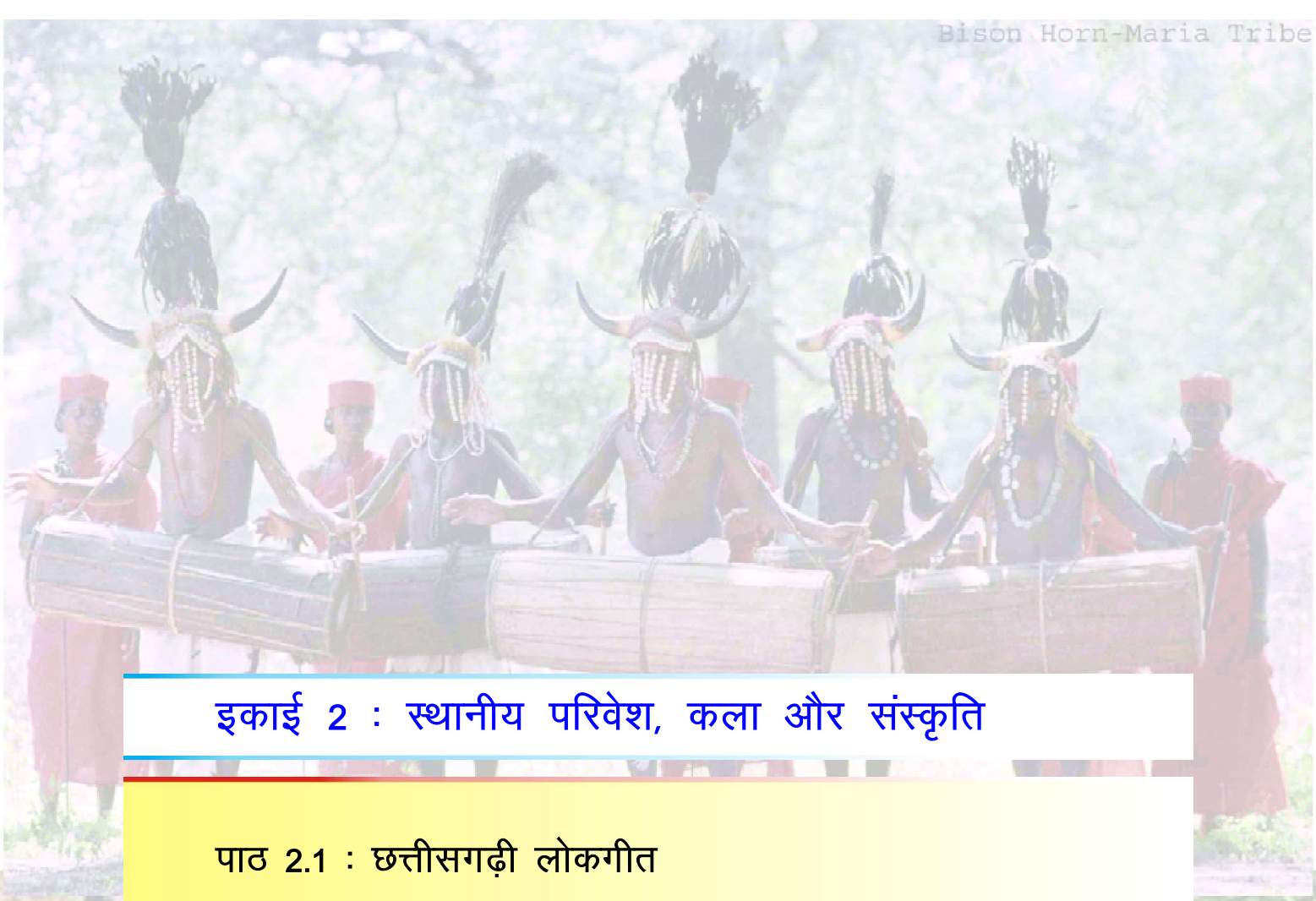

इकाई 2 : स्थानीय परिवेश, कला और संस्कृति

पाठ 2.1 : छत्तीसगढ़ी लोकगीत

पाठ 2.2 : गद्दार कौन

पाठ 2.3 : कलातीर्थ : खैरागढ़ का संगीत विश्वविद्यालय

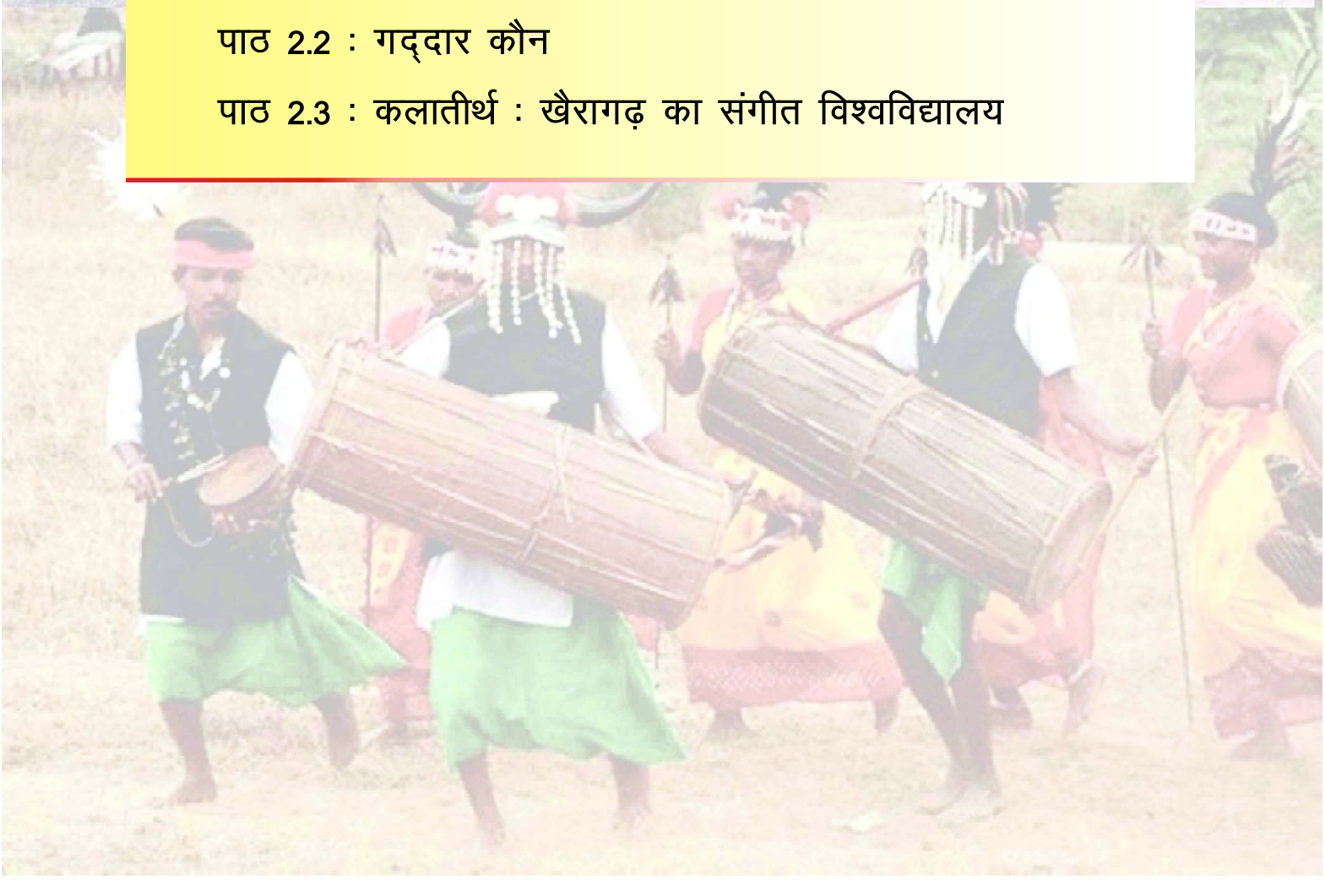

इकाई 2

स्थानीय परिवेश, कला और संस्कृति

देश के अन्य राज्यों की तरह छत्तीसगढ़ भी कला, संस्कृति, और सांस्कृतिक विविधता की दृष्टि से समृद्ध है। यहाँ की लोकसंस्कृति के विभिन्न रंग हमें लोकगीतों, नृत्यों, कलाओं एवं लोककथाओं में दिखाई देते हैं। यह विविधता ही इसकी सुन्दरता है, इसे जानना आवश्यक है। अपने परिवेश की सांस्कृतिक एवं सौन्दर्य की धरोहरों को पहचानना और उसकी सराहना करना तथा उनमें आनंद ले सकना सभी के लिए आवश्यक है। विद्यार्थियों के सृजनात्मक मस्तिष्क को हमारी संस्कृति में मौजूद विशिष्टताओं को अपनाने एवं प्रोत्साहित करने के लिए इस इकाई में तीन पाठ सम्मिलित किए गए हैं।

डॉ. जीवन यदु द्वारा लिखित लेख **छत्तीसगढ़ी लोकगीत** हमें छत्तीसगढ़ी लोकगीतों की समृद्ध परंपरा से परिचित कराकर सौन्दर्यबोध का विकास करने और इस अनूठी संस्कृति को इसकी विविधता और समृद्धि सहित बचाए रखने हेतु प्रेरित करता है।

गद्दार कौन लोककथा हमारी परंपराओं में निहित जीवन मूल्यों से हमें परिचित कराती है। अवांछित और अनैतिक मूल्यों को अस्वीकार कर सत्य और श्रेष्ठ का वरण करने का संदेश देती है। यह लोककथा हमारे उच्च सांस्कृतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा करती है।

अपने परिवेश की सांस्कृतिक धरोहरों की पहचान कराता हुआ पाठ **कलातीर्थ : खैरागढ़ का संगीत विश्वविद्यालय** एशिया में अपनी तरह के अनूठे इस विश्वविद्यालय से न केवल हमें परिचित कराता है बल्कि गुणवत्ता और श्रेष्ठता पर गर्व करने हेतु प्रेरित भी करता है।

आशा है इन पाठों के माध्यम से कला–संस्कृति की शिक्षा एक आवश्यक उपकरण एवं विषय के रूप में राज्य की शिक्षा का महत्त्वपूर्ण हिस्सा बनेगी और विद्यार्थियों की सृजनात्मकता को प्रोत्साहित करेगी।

पाठ 2.1 : छत्तीसगढ़ी लोकगीत

डॉ. जीवन यदु

AYD3GP

*लोकसाहित्य के अध्येता और छत्तीसगढ़ के प्रमुख गीतकारों में एक विशेष नाम है डॉ. जीवन यदु का। उनका जन्म 1 फरवरी सन् 1947 ई. को खैरागढ़ में हुआ। आपकी प्रारंभिक शिक्षा भी यहीं हुई। 'लोकसाहित्य' में आपको डॉक्टरेट की उपाधि मिली, कविता आपकी मुख्य विधा है, पर विचारपरक लेख भी आपने बहुत लिखे हैं। **झील की मुक्ति के लिए** (काव्य संग्रह), **अनकहा है जो तुम्हारा** (गीत संग्रह), **छत्तीसगढ़ी कविता– संदर्भ एवं मूल्य** (आलोचना), **अइसनेच रात पहाही** (छत्तीसगढ़ी काव्य नाटिका) तथा **धान के कटोरा** (कविता संग्रह) आपकी प्रमुख कृतियाँ हैं। नवसाक्षरों के लिए लिखी आपकी रचनाएँ भी प्रकाशित हुई हैं। वर्तमान में खैरागढ़ में ही निवासरत हैं। प्रस्तुत लेख उनके निबंध संग्रह **लोकस्वप्न में लिलिहंसा** से लिया गया है।*

लोकगीत 'लोक' की आंतरिकता का लयबद्ध और संगीतबद्ध अभिव्यक्ति है। 'लोक' ने अपनी जिस आंतरिकता के प्रकाशन के लिए विभिन्न माध्यम अपनाए, वह आंतरिकता युगीन व्यवस्थाओं के दबावों से कभी मुक्त नहीं रही और न कभी हो सकती है। अतः लोकगीत 'लोक' की सांस्कृतिक यात्रा का ऐसा साक्षी है, जो अपनी परंपरा में नवीनता का पक्षधर है। आज के लोकगीत–संगीत आदिम गीत–संगीत नहीं हैं, यद्यपि उन्होंने उनसे रस अवश्य ग्रहण किया होगा। मनुष्य के शिकारी जीवन से निकलकर पशुपालक व्यवस्था में प्रवेश करने के बाद ही लोकगीत और लोकसंगीत ने रूप ग्रहण किया था। फिर वे कृषि व्यवस्था और सामंती व्यवस्था को पार कर, आज इस जटिल युग में अपने परिवर्तित रूप में पहुँचे हैं। लोक की आंतरिकता पर उन सभी व्यवस्थाओं का असर रहा है। लोकगीतों में उन व्यवस्थाओं की स्मृतियाँ, अवशेषादि इसीलिए आज भी मिलते हैं। उन व्यवस्थाओं को लेकर लोकमानस पर जो प्रतिक्रियाएँ हुईं, उन्हीं से लोक साहित्य सृजित हुआ, जिसका एक बड़ा हिस्सा संगीतमय है।

चूँकि लोकमानस एक–सा होता है, अतः लोकगीतों के आंतरिक एवं बाह्य बुनावट को क्षेत्रान्तर अधिक प्रभावित नहीं करता। किसी विशिष्ट व्यवस्था में रहते हुए दुख और सुख की, असुरक्षा और संघर्ष की, जय और पराजय की अनुभूतियों का कलात्मक प्रकटीकरण लोक की सांस्कृतिक अनिवार्यता है। अतः यदि हम छत्तीसगढ़ क्षेत्र के लोकगीतों का अध्ययन करें, तो भी सारे क्षेत्रों के लोकगीतों की मूल प्रकृति, बनावट, बुनावट गुण–धर्म आदि स्पष्ट हो जाएँगे।

लोकगीत चूँकि सामाजिक व्यवस्थाओं और परंपराओं की देन हैं और उनकी रचना किसी विशिष्ट व्यक्ति द्वारा न होकर, उन सामान्य व्यक्तियों द्वारा होती है जिनका व्यक्तित्व सामाजिक व्यक्तित्व में पूरे तौर पर रूपान्तरित अथवा समाहित हो चुका है। लोकगीतकारों और लोकगायकों के माध्यम से एक पूरी जाति अपनी बात समवेत सुर में रखती है। यही कारण है कि लोकगीतों में व्यक्ति विशेष के बदले पूरी जाति का व्यक्तित्व परिलक्षित होता है।

लोकगीतों में ऐसे गीतों का मिलना असंभव नहीं, तो मुश्किल ज़रूर है, जो 'अकेले आदमी की पुकार' या 'अरण्यरोदन' बनकर लांछित हों। क्योंकि :

''डहर म रेंगय, हलाए डेरी हाथ।

अकेल्ला झन रेंगबे, बनाले संगी साथ।।''

(भावार्थ– बायाँ हाथ हिलाते हुए राह में अकेले मत चलो, किसी को अपना साथी बना लो।)

– जैसे विचारों को लेकर लोक जीवन चलता है।

दीपावली के अवसर पर छत्तीसगढ़ में 'सुआगीत' गाने की परंपरा है। चूँकि लोकगीतों में सुख और दुख दोनों का सामाजीकरण होता है, अतः सुआगीत की नारी पीड़ा समूची नारी जाति की पीड़ा बन जाती है।

''चंदा सुरुज तोर पैंया परत हँव,

तिरिया जनम झन देबे न रे सुआ न।

पहली गवन करि डेहरी बैठारे न रे सुआ न,

धनि छोड़ चले बनिझार।।

(भावार्थ– हे चाँद और सूरज, मैं तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ अगले जन्म में मुझे स्त्री मत बनाना। गौना कराने के बाद मैं पहली बार अपने पति के घर आई हूँ, और मेरे पति है, कि मुझे यहाँ अकेली छोड़कर खुद काम पर चले गए हैं।)

''तुलसी के बिरवा जब झुरमुर होइ है,

रे सुआ न, मोर मयारू गए रन जूझ ।।''

यह और बात है कि सुआगीत की नारी–पीड़ा मध्य युगीन नारी–पीड़ा है, तब नारी होना अपने आप में पीड़ादायक बात मानी जाती थी। उन नारियों की करुणा लोकमानस में लगातार घुल रही है। इससे एक बात और स्पष्ट होती है, कि लोकगीतों में इतिहास छुपा होता है, उनके भावों में ही नहीं, उनके शब्दों में भी इतिहास की झलक होती है–

''पान खाय सुपारी खाय

सुपारी के दुइ फोरा।

रंग–महल में बइठो मालिक

राम–राम लौ मोरा। ''

'राउत नाचा' के इस दोहे में दो शब्द – 'रंगमहल' और 'मालिक' सामंती व्यवस्था की याद दिलाते हैं, जो लोकमानस में घुल–मिल गए हैं।

लोकगीतों के शब्द और धुन, दोनों में मस्ती होती है। लोकजीवन उस मस्ती का अमृत पीकर अपने दुख को भी भूल जाता है। शृंगार और प्रेम की खुली अभिव्यक्ति लोकजीवन की उसी मस्ती का परिणाम है।

''बटकी म बासी अउ चुटकी म नून,

मैं गावत हौं ददरिया, तैं कान दे के सुन।''

लोकजीवन 'नून और बासी' खाकर भी ददरिया की मस्ती में डूब सकता है, शृंगार का सृजन कर सकता है और प्रेम को शब्द दे सकता है।

''अमली के लकड़ी, काटे म कटही।

तोर मोर पिरीत हा मरे म छुटही।।''

पूर्व में कहा जा चुका है कि लोकगीत लोक की सांस्कृतिक यात्रा का साक्षी है। लोकसंस्कारों की पूरी छाप लोकगीतों पर होती है, उनमें न केवल स्थूल लोकसंस्कार (कर्मकांड) ही प्रदर्शित होते हैं, वरन ऐसे लोकसंस्कार भी चित्रित होते हैं जो लोकस्वभाव में घुस कर लोकचरित्र में शामिल हो चुके हैं। उदाहरण के तौर पर विवाह–संस्कार का यह गीत लिया जा सकता है–

''ददा तोर लानिथै हरदी–सुपारी वो,

दाई लानय तिला तेल।

कोन चढ़ाथय तोर मन भर हरदी वो,

कोन देवय अँचरा के छाँव।

फुफू चढ़ावै तोर तन भर हरदी वो,

दाई देवय अँचरा के छाँव।''

(भावार्थ– तुम्हारे पिता हल्दी–सुपारी लाते हैं और माँ तिल का तेल लाती है। कौन तुम्हें मन भर हल्दी चढ़ाएगा? कौन तुम्हें अपने आँचल की छाँव देगा? बुआ तुम्हारे तन पर हल्दी चढ़ाएगी और माँ अपने आँचल की छाँव देगी।)

इसी तरह इस गीत में सारे रिश्तेदारों को जगह दी जाती है। यदि हम इसमें गहरे उतरें तो लोकस्वभाव को देख और समझ पाएँगे। सहयोग लोक का स्वभाव है। विवाह जैसे कार्यों में सारे रिश्तेदारों का सहयोग होता है। उस सहयोग को लोकगीतकार सूक्ष्मता से रेखांकित करता है। ऐसे गीत आत्मीय वातावरण निर्मित करने में सक्षम होते हैं। इसी तरह एक विवाह गीत में रिश्तों के सर्वमान्य स्वभाव को रेखांकित किया गया है।

लोकगीत जनजीवन को पूरी बारीकी से खोलते हैं। यद्यपि वे अपनी ऊपरी परत से सामान्य लगते हैं, लेकिन उनमें लोकजीवन के संस्कार, व्यवहार और स्वभाव की गहराई होती है।

''देतो दाई, देतो दाई अस्सी वो रुपैया,

सुंदरी ला लातेव मैं बिहाय।

''तोर बर लानहूँ दाई रँधनी–परोसनी,

मोर बर घर के सिंगार।''

उपरांकित नहडोरी गीत में नायक अपनी माँ से निवेदन करता है कि हे माँ! मुझे अस्सी रुपए दे दो, जिससे मैं सुंदरी को ब्याह कर, आपके लिए राँधने–परोसने वाली और अपने घर का शृंगार ला सकूँ। इन चार पंक्तियों में कई बातें स्पष्ट होती हैं। पहले तो यह कि लोकजीवन में विवाह ज्यादा खर्चीला नहीं होता। नायक अस्सी रुपए में सुंदरी नायिका से विवाह कर सकता है। यह तब की कल्पना हो सकती है, जब लोकजीवन में अस्सी रुपए का कोई बड़ा अर्थ रहा होगा। दूसरी बात यह कि उस विवाह से, नायक अपने लिए सिर्फ पत्नी ही नहीं लाएगा, अपनी माँ के लिए राँधने–परोसनेवाली भी लाएगा। वह 'राँधने–परोसनेवाली' उसकी पत्नी ही नहीं, उस घर का शृंगार भी होगी। इस तरह इससे छत्तीसगढ़ के लोकजीवन की आर्थिक स्थिति, लोकजीवन का स्वप्न, लोक जीवन की भीतरी आत्मीय दुनिया आदि एक साथ स्पष्ट होते हैं।

लोकगीत सहज संप्रेष्य होते हैं। इसके कुछ कारण हैं– पहला, लोकगीत किसी एक व्यक्ति की अभिव्यक्ति नहीं हैं। दूसरा, लोकगीत समूह की मानसिकता पर आधारित होते हैं। तीसरा, लोकगीत विचारों के वाहक ही नहीं, रंजन का साधन भी हैं और चौथा, लोकजीवन की सहजता लोकगीतों को असहज नहीं होने देती। 'जँवारा–गीत' की निम्नांकित पंक्तियाँ इसकी पुष्टि करती हैं–

''माता फूल गजरा गूँथव हो मालिन के

देहरी, हो फूल गजरा।

काहेन फूल के गजरा, काहेन फूल के हार।

काहेन फूल के तोर माथ मटुकिया, सोलहों सिंगार।

चंपा फूल के गजरा चमेली फूल के हार।

चमेली फूल के माथ मटुकिया, सोलहों सिंगार।''

इस लोकगीत में अध्यात्म या भक्ति के स्थान पर लोकजीवन में देवी माँ की कल्पना भी सादगीपूर्ण है– अपनी खुद की माँ की तरह। सोने–चाँदी के गहनों के स्थान पर फूलों के गहने हैं, जो लोक को सुलभ है, वही लोक का सत्य है। लोक की सादगी ही लोक का ऐश्वर्य है। एक व्यक्ति की अभिव्यक्ति में ऐश्वर्य का रूप इससे अलग होता है। वह अभिव्यक्ति सहज संप्रेष्य नहीं होती है। समूह की मानसिकता पर आधारित होने के कारण

लोकगीतों में जीवन के व्यवहारों का सामान्यीकरण हो जाता है। अतः हर आदमी के हृदय को गीत के लय और शब्द छू सकें।

लोकगीतों में बहुत से गीत ऐसे मिलेंगे जिनमें चित्रों की रचना हुई है। कथात्मक गीतों में यह बात निश्चित रूप से होती है। लोकगीतकार चित्रों की रचना इस तरह करते हैं कि श्रोताओं को वह घटना अपनी आँखों के सामने घटती–सी प्रतीत होती है। 'पंडवानी' की इन पंक्तियों को बतौर उदाहरण रख सकते हैं–

''रानी के नेवता कीचक पावे जी,

साजे सिंगार राजा चलत हावै न,

माथे म मुकुट राजा बाँधत हावै जी,

काने म कुंडल राजा पहिरत हावै जी,

गले म गजमुक्ता के हार सोहै जी,

इन पंक्तियों में विराट राजा महाबाहु के साले और राज्य के सेनापति कीचक के उस शृंगार का चित्रात्मक वर्णन है, जिसे उसने सैरंध्री (द्रौपदी) के कक्ष में जाते समय धारण किया था। इसी तरह 'पंडवानी' के सेना– प्रयाण के दृश्य को लोक गीतकार ने चित्र और ध्वनि के माध्यम से उभारा है।

लुहँगी, साँप सँलगनी,

हाथी हदबद, गदहा गदबद,

घोड़ा सरपट, पैदल रटपट,

सेना करिन पयान।'

चूँकि लोकप्रकृति 'मुक्ति' की हामीदार है, मोक्ष की नहीं। अतः लोकसाहित्य में आए चमत्कारी देवता–लोक को भौतिक सुविधा प्रदान करने वाले लगते हैं। गोपालक जातियाँ 'बाँस गीत' गाती हैं–

''पहली धरती अउ पिरथी, दूसर बंदव अहिरान

तीसर बंदव गाय– भँइस ला, काटय चोला के अपराध।

चौथे बंदव नोई कसेली, राउत के करे प्रतिपाल।

पँचहे बंदव अहिर पिलोना, जनमें हे गोपी गुवाल।''

(भावार्थ– पहले धरती को प्रणाम करता हूँ, दूसरा प्रणाम सभी अहीरों को, तीसरा प्रणाम गाय–भैंसों को करता हूँ जिनकी सेवा से पाप कट जाते हैं, चौथा प्रणाम नोई और कसेली को जिनसे मेरी आजीविका चलती है, पाँचवें यादव कुल को प्रणाम जिसमें श्रीकृष्ण और गोपी ग्वालों का जन्म हुआ था।)

'मतराही' जाने से पहले राउत अपने घर का भार अपने गृह देवता पर इस तरह डालता है, जैसे वे उसके घर के कोई बुजुर्ग हों–

'' बोकरा लेबे के भेड़ा रे, या लेबे रकत के धार,

मैं तो जावत हौं मतराही, तोला लगे हे घर के भार।''

(भावार्थ– हे गृह देवता! तुम चढ़ावे के रूप में चाहे तो बकरा ले लो या चाहो भेड़ ले लो या फिर मेरे रक्त की धार ही ले लो। चूँकि मैं मतराही जा रहा हूँ इसलिए घर की सारी जिम्मेदारी अब तुम्हारी है।)

लोकगीतकारों ने संसार की वास्तविकता को स्वीकार करते हुए इसी तरह जगत को सत्य माना है। ''हरदाही– गीत' की ये पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

''खेल ले गोंदा जियत भर ले।

ये चोला नइ आवय घेरी–बेरी।''

लोकगीतों में विरोध का स्वर व्यंग्य में फूटता है। जमींदारी प्रथा से पीड़ित व्यक्ति अपने विरोध को प्रकट करने का मौका ढूँढ ही लेता है। 'मँड़ई' के समय राउत अपने दोहे में 'ठाकुर' को भी नहीं बख्शता–

''गाय बइला के सींग म, मैं हा देखँव माटी।

ठाकुर पहिरे सोना चाँदी, ठकुराइन पहिरे घाँटी।''

इस तरह एक दोहे का उदाहरण और लिया जा सकता है–

''जइसे मालिक लिये–दिये, तइसे देबो असीस।''

इस पंक्ति में 'लिये–दिये' और 'तइसे देबो' शब्द का एक विशिष्ट संबंध बनाकर वे व्यंग्यार्थ प्रकट करते हैं। यदि ठीक–ठाक लिया–दिया गया होगा, तभी हृदय से आशीर्वाद मिल सकता है, वरना नहीं।

लोकसाहित्य अपने परिवर्तन में ही विकास पाता है। वह इतिहास का हम–कदम होता है। लोकगीतकार जब अपने युगबोध को स्वर देता है तब–

''पीपर के पाना हलर– हइया।

अँगरेजवा के राज कलर– कइया।''

या

''नरवा के तिर हा दिखत हे हरियर।

टोपी वाला नइ दिखय, बदे हौं नरियर।''

(भावार्थ– नदी के किनारे हरे–भरे हो गए हैं, मुझे टोपी वाला नहीं दिख रहा है इसके लिए मैंने नारियल के साथ मन्नत माँगी है।)

जैसी रचनाएँ लोकजीवन को आंदोलित करने लगती हैं। नाचा–गम्मतों में लोकगायक ज्वलंत समस्याओं को लेकर जीवंत अभिव्यक्ति देते हैं। इस तरह छत्तीसगढ़ी लोकगीतों के माध्यम से हम यहाँ के समग्र लोकजीवन और लोकसंस्कृति को समझ सकते हैं।

टीप : कोष्टक में दिए गए भावार्थ रचनाकर के नहीं है। इसे विद्यार्थियों को समझने हेतु लिखा गया है।

शब्दार्थ

साक्षी – गवाह; **लोकजन** – आम जनता; **बाह्य** – बाहरी; **क्षेत्रांतर** – क्षेत्रों के बीच अंतर; **रूपांतरित** – परिवर्तित; **परिलक्षित** – दिखाई; **लांछित** – कलंकित; **डहर** – रास्ता; **डेरी** – बायाँ; **झन रेंगबे** – मत चलना; **झुरमुर** – मुरझाना; **मयारू** – प्रिय; **नून** – नमक; **दुइ फोरा** – फोड़कर दो भाग किया हुआ; **फुफू** – बुआ; **रँधनी** – पकाने की (का); **परोसनी** – परोसने की; **मटुकिया** – मुकुट; **घाँटी** – लोहे की बड़ी घंटी जो पशुओं के गले में पहनाई जाती है; **असीस** – आशीष; **नहडोरी** – विवाह के समय वर या वधू के स्नान की प्रक्रिया; कलर–कइया – झगड़ा, कलह; **नोई** – गाय बाँधने की रस्सी; **कसेली** – दूध दुहने का बर्तन; **मतराही** – यादव जाति के द्वारा भाईदूज के दिन मनाया जाने वाला पर्व (मातर–पर्व)।

अभ्यास

पाठ से

1. क्षेत्रीय लोकगीतों में पाई जाने वाली समानताएँ क्या–क्या हो सकती हैं?
2. सुआगीत की विशेषताएँ लिखिए।
3. राउत नाचा के दोहों में से उदाहरणार्थ कोई दोहा लिखिए जिससे सामंती व्यवस्था की याद आती हो।
4. 'मतराही' क्या है?
5. छत्तीसगढ़ के भक्ति संबंधी लोकगीत कौन–कौन से हैं?
6. लोकगीत सहज संप्रेष्य क्यों होते हैं?
7. पाठ में दिए गए कौन–कौन से लोकगीत पर्वों से संबंधित हैं?

पाठ से आगे

1. आपके आसपास ऐसे कौन–कौन से लोकगीत हैं जो–

   (क) केवल पुरुषों के द्वारा गाए जाते हैं?

   (ख) केवल महिलाओं के द्वारा गाए जाते हैं?

   (ग) पुरुषों और महिलाओं के द्वारा सम्मिलित रूप से गाए जाते हैं?

2. जैसे होली के अवसर पर 'फाग गीत' गाए जाते हैं, वैसे ही अन्य पर्वों पर कौन–कौन से लोकगीत गाए जाते हैं?

3. विवाहगीतों में हास्य–व्यंग्य कहाँ देखने को मिलता है? उदाहरण सहित लिखिए।

4. सुआगीतों का संकलन कर उनके विषय को लिखिए।

5. सुआ, पंथी, कर्मा और राउत नाचा में गीत के साथ किए जा रहे नृत्य की पोशाक और प्रयुक्त अन्य सामग्रियों की सूची बनाइए।

6. लोककथाओं के आधार पर रचे गए लोकगीतों के नाम लिखिए।

7. पंडवानी में गाई गई कथा के किसी एक प्रसंग को अपने शब्दों में लिखिए।

भाषा के बारे में

1. सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, वास्तविक आदि शब्द पाठ में आए हैं। इनमें मूल शब्दों में 'इक' प्रत्यय लगा है। इनके मूल शब्दों को पहचानकर लिखिए तथा ऐसे ही तीन उदाहरण और लिखिए।

2. 'अर्थ' तथा 'रस' ऐसे शब्द हैं जिनके एक से अधिक अर्थ हैं। आप ऐसे ही और पाँच शब्द खोजकर लिखिए।

3. पाठ से निम्नांकित शब्द लिए गए हैं। इन्हें स्त्रीलिंग और पुल्लिंग शब्दों के रूप में पहचानकर अलग कीजिए।

   प्रकाशन, व्यवस्था, माध्यम, परंपरा, नवीनता, संगीत, रस, लोकगीत, स्मृतियाँ, प्रतिक्रियाएँ।

पुल्लिंग शब्द	स्त्रीलिंग शब्द
उदाहरण– प्रकाशन	परंपरा

4. निम्नांकित शब्दों का उपयोग करते हुए एक कहानी लिखिए–

   शिकारी, किसान, चरवाहा, जंगल, बाँसुरी, संगीत, वन्य–पशु, चिड़िया, शेर, चरवाहा, राजा, भय, पुरस्कार, प्रसन्नता, दरबार।

5. 'लोक' शब्द में गीत जोड़कर बना लोकगीत। आप 'लोक' शब्द के साथ अन्य शब्द जोड़कर कितने शब्द बना सकते हैं? लिखिए।

6. निम्नांकित शब्द एक थीम की तरह दिए गए हैं। आपको इस थीम से संबंधित और शब्द लिखने हैं। यह खेल नीचे दिए गए उदाहरण की तरह होगा, याद रहे आपके शब्द उस 'थीम' के अंतर्गत ही होने चाहिए।

उदाहरण–

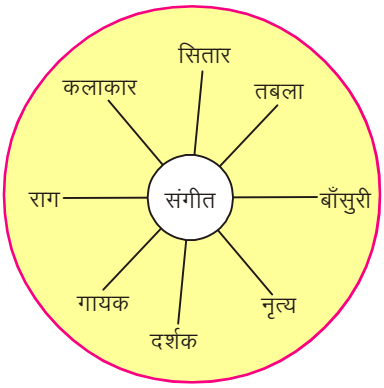

(क) वर्षा (ख) विद्यालय

योग्यता विस्तार

1. छत्तीसगढ़ी विवाह गीतों का संकलन कर एक फाइल बनाइए।
2. लोकगीतों के साथ प्रस्तुत किए जाने वाले नृत्यों के चित्र संकलित कर उनकी फाइल बनाइए।
3. यहाँ 'जसगीत' की कुछ पंक्तियाँ दी जा रही हैं, इन्हें पढ़िए और समूह में गाइए।

माँ आशीष देबे हो,
तोरे सरन मा आयेन माँ, आशीष देबे हो
हम लइका हन हमला तैं हा
कभु नहीं बिसराबे वो
माँ आशीष देबे हो,
तोरे सरन मा आयेन माँ आशीष देबे हो।
तहीं भवानी तहीं शारदा तहीं हवस जगदंबा
तोर प्रतापे तोड़िन वो बेंदरा–भालु मन गढ़ लंका
माँ आशीष देबे हो
तोरे सरन मा आयेन माँ आशीष देबे हो।

BBA41J

पाठ 2.2 : गद्दार कौन

नारायण लाल परमार

नारायण लाल परमार का जन्म 1 जनवरी 1927 को हुआ। वे छत्तीसगढ़ में नई कविता के प्रारंभिक कवियों में से एक थे। वे हिंदी और छत्तीसगढ़ी के ख्यातिनाम कवि थे। बच्चों के लिए भी उन्होंने कई विधाओं में बहुत–सी किताबें लिखीं। उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं– ***रोशनी का घोषणा पत्र, काँवर भर धूप, खोखले शब्दों के खिलाफ, सब कुछ निष्पंद है*** *तथा* ***विस्मय का वृंदावन*** *साहित्य के क्षेत्र में उनके उल्लेखनीय योगदान के लिए उन्हें मुक्तिबोध सम्मान मिला। 27 अप्रैल 2003 को उनका निधन हुआ।*

नवलगढ़ राज्य में यह प्रथा चली आ रही थी कि हर साल दशहरे के दिन राजधानी में एक बड़ा मेला भरता। प्रजा का हर व्यक्ति राजा को अपनी शक्ति के अनुसार भेंट चढ़ाता, राजमहल खूब सजाया जाता। नगर में कम उत्साह नहीं रहता। दूर–दूर से नृत्य मंडलियाँ आतीं, संगीत के कलाकारों का जमाव होता और रामलीला का तो जैसे अंत ही न होता। सचमुच राजधानी मानिकपुरी उस दिन सजी–धजी दुल्हन से कम न लगती।

उस साल भेंट इतनी अधिक चढ़ी कि राजा रामशाह खुद आश्चर्य में पड़ गए। उन्होंने राजा साहब की तारीफ के पुल बाँध दिए और उनकी तुलना भगवान श्रीरामचंद्रजी से करने लगे। वे यह कहने से भी न चूके कि संसार में ऐसा कोई राज्य है तो वह नवलगढ़ राज्य है जिसमें शेर और बकरी एक घाट पर पानी पीते हैं।

राजा साहब सुनकर खुश हुए। पंडित रामभगत को वे राजपुरोहित कम और अपना दोस्त अधिक समझते थे। अपनी प्रसन्नता प्रकट करने के लिए उन्होंने पंडितजी को ढेर सारी सोने की मुद्राएँ भेंट कीं।

रात को पंडितजी घर में पंडिताइन से कहने लगे कि यह बूता पंडित रामभगत का ही है जिन्होंने राजा साहब के यश को चारों दिशाओं में फैला दिया है। राजा साहब उनकी हर बात को आदरपूर्वक मान लेते हैं। दूसरे राजाओं की तरह वे विलासी या आरामतलब नहीं हैं। वे प्रजा की भलाई का भी सदा ध्यान रखते हैं। प्रजा भी उन्हें सच्चे मन से चाहती है। जीवन की सफलता के अनेक रहस्य उन्होंने राजा साहब को सिखलाए हैं।

इस तरह नींद आने के पहले पंडिताइन यह मान गई कि सचमुच उसके पति नवलगढ़ राज्य की एक बहुत बड़ी हस्ती हैं।

पंडित रामभगत, जब कभी समय मिलता, अपनी इस विद्या की थोड़ी बहुत बानगी अपने इकलौते पुत्र रामचरण को भी देते। उनको यह विश्वास था कि एक न एक दिन जब राजा रामशाह की जगह उनका पुत्र लेगा तो उनकी जगह भी रामचरण बखूबी ले लेगा। अभी तो राजपुत्र और ब्राह्मणकुमार की पढ़ाई अलग–अलग होने लगी। एक दिन ऐसा भी आया कि जब राजेंद्रशाह राजा हुए और पंडितजी का बेटा उनका राजपुरोहित। नई उमर

थी, नए विचार थे। आरंभ से ही दोनों टकराने लगे। राजेंद्रशाह अपने पिता से भिन्न उद्दंड और विलासी था। इसके विपरीत रामचरण कुछ अधिक बुद्धिवादी और तर्क करने वाला था।

अब रोज सवेरे नृत्य और संगीत की महफिल जमती। राजेंद्रशाह को बड़ा मजा आता। रामचरण बीच में कभी उन्हें टोकता, प्रजा की ओर उनका ध्यान खींचता तो वे उसे झिड़क देते। अजीब परिस्थिति आ गई। वैसे रामचरण जानता था कि बुरी आदतों को जल्दी बदला नहीं जा सकता। वह अपमान सहता और अपने कर्तव्य का पालन करता जाता। परंतु कब तक? इधर राजा की विलासप्रियता बढ़ती गई और उधर खजाना खाली होता गया। प्रजा के दुख बढ़ने लगे। रामचरण ने राजा को आखिरी नेक सलाह दी। परिणाम में उसे अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ा।

रामचरण निराश नहीं हुआ। उसने आसपास के गाँवों में शिक्षा प्रसार का बीड़ा उठा लिया। उसे इस काम में बड़ी सफलता मिली। धीरे–धीरे राजा के कुछ खुशामदियों को यह बात खलने लगी। ज्यों–ज्यों रामचरण का यश बढ़ता जाता त्यों–त्यों उसकी शिकायतें भी बढ़ती गईं। एक दिन उसे प्रजा को भड़काने के आरोप में राजा के सामने पेश किया गया।

नए राजपुरोहित ने मामले को संगीन बताया। उसने कहा–प्रजा को राजा के विरुद्ध भड़काना सबसे बड़ा पाप है। राज–दरबारियों ने भी हामी भरी। बेचारा रामचरण क्या करता? उसकी एक न सुनी गई।

मृत्युदंड सुनाने के पहले राजेंद्रशाह ने पूछा कि यदि कोई अंतिम इच्छा है तो कहो। रामचरण ने कहा 'महाराज! अब तक मैंने आपको अपनी शक्ति के अनुसार बहुत सी बातें बतलाई हैं। अब चाहता हूँ कि मोतियों की फसल उगाने का गुर भी आपको बता दूँ।

यह सुनना था कि दरबारी दंग रह गए। कुछ लोगों को शंका हुई कि यह कहीं धोखा देकर भाग न जाए। परंतु राजा ने उस पर विश्वास किया। कहा, ''हम तुम्हें मौका देंगे। अपनी यह विद्या तुम हमें अवश्य सिखा दो''। राजा से आज्ञा लेकर रामचरण अपने काम में जुट गया। उसने कुछ बीघे अच्छी जमीन ली। उसे जोतकर उसमें गेहूँ डलवा दिए। शर्त यह रखी गई कि वह अपना काम चुपचाप ही करेगा। कोई भी उसमें बाधा न डाल सकेगा।

दुश्मनों ने बहुत चाहा कि देखें, आखिर वह पंडित का बच्चा क्या करता है? परंतु वे रामचरण के काम की टोह न पा सके। समय पर अंकुर निकले और फिर पौधे बड़े हो गए।

एक धुंध भरी सुबह को रामचरण राजा और उसके मुसाहिबों को लेकर खेत पर पहुँचा। हर पौधा ओस की सुनहरी बूँदों से जड़ा हुआ था। रामचरण ने कहा लीजिए– मोतियों की फसल। एक मुसाहिब ज्यों ही उसे तोड़ने के लिए बढ़ा, रामचरण चिल्लाया, 'ठहरो! यह मोतियों की पवित्र फसल है, इसे वही व्यक्ति हाथ लगा सकता है जिसने अब तक देश के प्रति गद्दारी न की हो।

सब के चेहरे फीके पड़ गए। कुछ देर तक वे एक दूसरे की सूरत देखते रहे और जिधर से जाते बना, सब चल दिए। अंत में बचे राजा। उनकी आँखें आत्मज्ञान से मानो चमक उठीं। दूसरे ही पल उनका मस्तक पंडित रामचरण के चरणों में था।

शब्दार्थ

लालसा – प्राप्त करने की इच्छा; **विलासी** – आमोद–प्रमोद और व्यसन में डूबा रहने वाला; **बखूबी** – अच्छी तरह से, भली–भाँति; **उद्दंड** – अक्खड़; **गुर–**युक्ति, कार्य सिद्धि का मूलमंत्र; **आराम तलब** – आराम करने की इच्छा रखने वाला; **मुसाहिब** – चाटुकार।

अभ्यास

पाठ से

1. दशहरे पर नवलगढ़ राज्य में होने वाले आयोजन के बारे में लिखिए।
2. राजा रामशाह और उनके राजपुरोहित पंडित रामभगत के आपसी संबंध कैसे थे?
3. रामचरण को नौकरी से क्यों हाथ धोना पड़ा?
4. मोतियों की फसल वस्तुतः क्या थी?
5. रामचरण की सफलता पर किस तरह की प्रतिक्रियाएँ हुईं?
6. राजा रामशाह और उनके पुत्र राजेंद्रशाह के व्यक्तित्व में क्या–क्या समानताएँ थीं? एक तालिका के रूप में लिखिए।

राजा रामशाह	राजा राजेंद्रशाह

पाठ से आगे

BBSV4U

1. अपने गाँव या शहर में किसी पर्व पर चली आ रही प्रथा के विषय में लिखिए।
2. आपके गाँव में प्रचलित तीन अच्छी और तीन बुरी प्रथाओं के विषय में तीन–तीन वाक्य लिखिए।
3. यदि राजेंद्रशाह के स्थान पर रामचरण राजा बन जाता तो राज्य की स्थिति क्या होती?
4. कहानी में राजपुरोहित द्वारा राजा की झूठी तारीफ कर सोने की मुद्राएँ प्राप्त करते हुए बताया गया है। ऐसा करना उचित है या अनुचित? अपने उत्तर तर्क सहित लिखिए।

भाषा के बारे में

1. पाठ में दिए गए इन मुहावरों के अर्थ लिखकर उनका अपने वाक्यों में प्रयोग कीजिए–

   (क) तारीफ के पुल बाँधना

   (ख) बीड़ा उठाना

   (ग) राई का पहाड़ बनाना

   (घ) चेहरा फीका पड़ना

   (ङ) टोह न पाना

2. वाक्य के रेखांकित शब्दों में अनुस्वार (ं) या चंद्रबिंदु (ँ) लगाइए और लिखिए

   (क) राजा ने पंडित जी को ढेर सारी मुद्राए दीं।

   (ख) हर पौधा ओस की सुनहरी बूदों से जड़ा हुआ था।

   (ग) मृत्युदड सुनाने से पहले राजेंद्रशाह ने पूछा।

   (घ) अभी तो राजपुत्र और ब्राह्मण कुमार आगन में खेल रहे थे।

   (ङ) दूर–दूर से नृत्य मडलिया आतीं।

3. निम्नांकित वाक्यों के रेखांकित शब्दों को उनके हिंदी पर्याय से इस तरह बदल कर लिखिए कि उनके अर्थ में परिवर्तन न हो।

   (क) हम तुम्हें मौका देंगे।

   (ख) कुछ खुशामदियों को यह बात खलने लगी।

   (ग) नए राजपुरोहित ने मामले को संगीन बताया।

   (घ) प्रजा को राजा के खिलाफ भड़काना पाप है।

   (ङ) इधर राजा की विलासप्रियता बढ़ती गई और उधर खजाना खाली होता गया।

4. निम्नांकित वाक्यों से कारक चिह्न पहचानकर अलग कीजिए।

   (क) प्रजा का हर व्यक्ति राजा को अपनी शक्ति के अनुसार भेंट चढ़ाता।

   (ख) परिणामतः उसे अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ा।

   (ग) उनकी आँखें आत्मज्ञान से मानो चमक उठीं।

(घ) संसार में ऐसा अगर कोई राज्य है तो वह नवलगढ़ है।

(ङ) राजा ने उस पर विश्वास किया।

योग्यता विस्तार

1. एक अन्य लोककथा खोजकर लाइए और उसे अपनी भाषा में लिखकर शाला की भित्ति पत्रिका में लगाइए।
2. 'आँख' से संबंधित मुहावरों की सूची तैयार कीजिए और उनके अर्थ भी लिखिए।
3. अपने अधिकारी या प्रभावशाली व्यक्ति की झूठी प्रशंसा कर लाभ उठाने के उदाहरण तुम्हारे आसपास भी दिखाई देते होंगे। कक्षा, विद्यालय या समाज से ऐसा एक उदाहरण ढूँढ़कर उसके विषय में अपने साथियों से चर्चा करें।
4. आपने राजा और राजपुरोहित की यह कथा पढ़ी। इसी तरह अकबर–बीरबल तथा तेनालीराम की कथाएँ लिखी गई हैं। इन्हें खोजकर पढ़िए।
5. छत्तीसगढ़ के मानचित्र में निम्नांकित स्थानों को दर्शाइए।

(क) खैरागढ़

(ख) रतनपुर

(ग) सरगुजिहा भाषा वाला क्षेत्र

(घ) कांगेर घाटी

(ङ) कुटुंबसर गुफा

(च) मैनपाट

(छ) राज्य का सबसे ठंडा क्षेत्र

(ज) दंतेवाड़ा

BCBM85

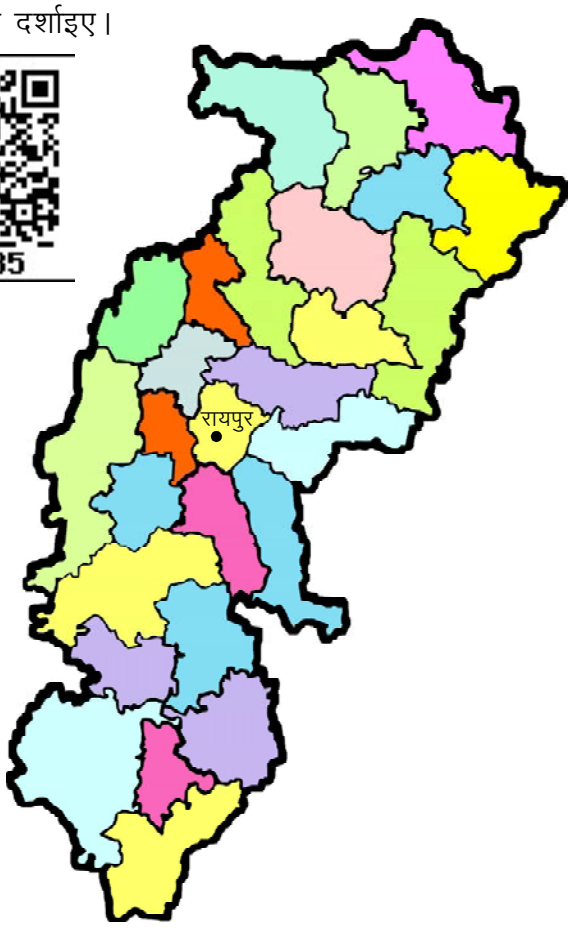

पाठ 2.3 : कलातीर्थ : खैरागढ़ का संगीत विश्वविद्यालय

डॉ. राजन यादव

डॉ. राजन यादव का जन्म 19 अक्टूबर सन् 1968 को कबीरधाम जिले के पीपरमाटी गाँव में हुआ। उनकी प्रारंभिक शिक्षा उनके गृह ग्राम, कंझेटा और कुण्डा में हुई। डॉ. यादव भक्तिकालीन हिंदी साहित्य और लोक साहित्य के विशेषज्ञ माने जाते हैं। उनकी प्रमुख प्रकाशित रचनाएँ ***तुलसी तरंग*** *(समीक्षा ग्रंथ)* ***विविधा*** *(साहित्यिक निबंध)* ***मध्ययुगीन हिंदी कविता में बसंत वर्णन*** *(शोध ग्रंथ) हैं।*

कलात्मक सौंदर्य का संबंध जीवन और समाज से होता है। युग की उपलब्धियाँ और सीमाएँ दोनों ही कला में उभरती हैं। इसलिए कला को भारतीय जीवन में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। यहां कला के विविध रूपों की साधना हमारी जीवन यात्रा की लम्बी और गौरवपूर्ण गाथा है। भारतीय संस्कृति जितनी पुरानी है, उतनी ही पुरानी इसकी कलाएँ हैं। भारतीय कला–चिंतन में कला को एक साधना माना गया है। प्राचीन आचार्यों ने कला को भक्ति से भी जोड़ा है। भर्तृहरि ने तो साहित्य संगीत और कला से विहीन मनुष्य को पूँछ और सींग से रहित साक्षात् पशु कहा है– 'साहित्य संगीतकला विहीनः, साक्षात् पशुः पुच्छविषाण हीनः।' भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता का एक कारण उसकी कलात्मकता भी है। संगीत आदि ललित–कलाएँ मानव जीवन को पूर्णता प्रदान करती हैं तथा मानवता को प्रांजल बनाती हैं। इनमें व्यक्ति का व्यक्तित्व तो भास्वर होता ही है, समष्टि–चेतना भी समन्वित रूप में बलवती हो उठती है। भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर इन्हीं कलाओं के संवर्धन और संरक्षण में इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़ का योगदान अविस्मरणीय है। विगत छप्पन वर्षों में विश्वविद्यालय ने उन्नति के अनेक शिखर छुए हैं।

खैरागढ़ भारत के मध्य भाग में स्थित छत्तीसगढ़ राज्य के राजनाँदगाँव जिले के अंतर्गत आता है। यहाँ का ग्रामीण एवं शांत परिवेश विश्वविद्यालय की कला और कला–साधना में विशेष सहायक है। यहाँ रियासत कालीन कलात्मक व गुलाबी रंग के महल की अपनी विशेषता है। नागवंश के दानवीर राजा–रानी ने अर्धशती पहले जो संगीत की बगिया लगाई थी, उसमें आज संगीत ही नहीं, सभी ललित–कलाओं के बहुरंगी व बहुगंधी पुष्प विकसित हो रहे हैं।

खैरागढ़ राज्य और नागवंश के अतीत पर दृष्टि डालें तो खैरागढ़ के इतिहास का आरंभ खोलवा–परगना से होता है जिसे मण्डला के राजा ने लक्ष्मीनिधि कर्णराय को उनकी वीरता के लिए सन् 1487 ई में पुरस्कार स्वरूप दिया था। इन्हीं के चारण कवि दलपतराव ने इस क्षेत्र के लिए पहली बार छत्तीसगढ़ शब्द का प्रयोग अपनी कविता में 1497 ई. में किया था। स्व. लाल प्रद्युम्न सिंह रचित ग्रंथ 'नागवंश' के अनुसार वर्तमान खैरागढ़ में नागवंशी राजाओं के इतिहास का आरंभ राजा खड़गराय से हुआ। वे खोलवा राज्य के सोलहवें तथा नई राजधानी खैरागढ़ के प्रथम राजा थे। उन्होंने पिपरिया, मुस्का तथा आमनेर नदी के मध्य अपने नाम से एक नगर बसाया। उस नगर के चारों ओर खैर वृक्षों की अधिकता थी। इतिहासकार दोनों मान्यताओं से सहमत हैं कि राजा खड़गराय या खैर वृक्षों की अधिकता की वजह से नगर को खैरागढ़ कहा जाने लगा।

कालांतर में यहाँ के नागवंशी राजा उमराव सिंह व राजा कमलनारायण सिंह जैसे प्रजावत्सल, विद्यानुरागी, कलाप्रेमी तथा साहित्य सृजक राजाओं ने स्वास्थ्य तथा संगीत–कला पर विशेष ध्यान दिया। प्राकृतिक सौंदर्य और सांस्कृतिक वैभव से सम्पन्न इसी धरती के मनोहर प्रांगण में आज से छप्पन वर्ष पूर्व एक अपूर्व विश्वविद्यालय का अविर्भाव हुआ। गुरु–शिष्य परम्परा से पल्लवित संगीत की शिक्षा के लिए विद्यालयों की परिकल्पना भी बाल्यावस्था में थी, उसी समय तत्कालीन मध्यप्रदेश के अंतर्गत छत्तीसगढ़ में स्थित खैरागढ़ नगर को इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय की स्थापना का गौरव प्राप्त हुआ। यहाँ के राजा वीरेन्द्र बहादुर सिंह एवं रानी पद्मावती देवी की प्रसिद्धि सदैव मुस्काती रहेगी, जिन्होंने अपनी दिवंगत पुत्री 'राजकुमारी इंदिरा' की स्मृति में सम्पूर्ण राजभवन का उदारतापूर्वक दान करके इस विश्वविद्यालय की स्थापना की। 14 अक्टूबर 1956 ईस्वी में श्रीमती इंदिरा गाँधी ने इसका उद्घाटन किया। यहीं से मध्यप्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री पं. रविशंकर शुक्ल के सहयोग से एशिया के इस प्रथम एवं एक मात्र विश्वविद्यालय की स्वर्णयात्रा आरंभ हुई।

इस विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति पद्मभूषण पं. एस.एन. रातंजनकर का संगीत के आरंभिक पाठ्यक्रम बनाने में महती योगदान रहा। उन्होंने संगीत की शिक्षा को घरानों की चहारदीवारी से निकालकर संस्थागत किया। शास्त्र और प्रयोग को एक दूसरे के नजदीक लाने और जोड़ने का कार्य किया इससे गीत, संगीत और नृत्य की शिक्षा के प्रति समाज का दृष्टिकोण सकारात्मक हुआ।

वर्तमान में विश्वविद्यालय के शिक्षण विभाग द्वारा संगीतकला, चित्रकला, मूर्तिकला, छापाकला, लोककला तथा साहित्य संबंधी डिप्लोमा, स्नातक तथा स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम संचालित हैं। यहाँ के बी.ए., बी.ए. (आनर्स) संगीत, नृत्य, लोकसंगीत तथा बी.एफ.ए., एम.ए., एम.एफ.ए. के पाठ्यक्रम रोजगारमूलक तथा जीवन पर्यंत उपयोगी हैं। यहाँ गायन पक्ष में– हिन्दुस्तानी गायन, कर्नाटक गायन, सुगमसंगीत तथा लोकसंगीत की प्रभावी शिक्षण व्यवस्था है। नृत्य पक्ष में– कथक, भरतनाट्यम तथा ओडिसी नृत्य की शास्त्रीय और प्रयोगात्मक शिक्षा दी जाती है। वाद्यपक्ष में तबला, वायलिन, सितार, सरोद, कर्नाटक बेला तथा लोकवाद्यों की शिक्षा दी जाती है। दृश्यकला के अंतर्गत चित्रकला, मूर्तिकला तथा छापाकला में स्नातकोत्तर तक की शिक्षा व्यवस्था है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू.जी.सी.) द्वारा स्वीकृत दो स्पेशलाइजेशन पाठ्यक्रम बैचलर ऑफ वोकेशन (बी.ओक.) फैशन डिजाइनिंग और टेक्सटाइल डिजाइनिंग का पाठ्यक्रम संचालित करने वाला यह एक मात्र विश्वविद्यालय है।

यहाँ कला संकाय में हिंदी, संस्कृत, अंग्रेजी भाषा एवं साहित्य के पाठ्यक्रम संचालित हैं। प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व तथा थियेटर की स्नातकोत्तर की पढ़ाई होती है। यहाँ पर्यावरण से लेकर दैनिक

जीवन में उपयोगी अनेक प्रकार की शिक्षा दी जाती है। विश्वविद्यालय में दर्जनों मनोरंजक तथा रोजगारमूलक डिप्लोमा तथा सर्टिफिकेट कोर्स संचालित हैं। विश्वविद्यालय में पाँच संकाय के बीस विभागों द्वारा संस्थागत, जीवन शिक्षण तथा व्यावसायिक शिक्षा दी जाती है। छत्तीसगढ़ का यह एक ऐसा विश्वविद्यालय है जिनके संबद्ध महाविद्यालय भारत के कई राज्यों में हैं। सम्पूर्ण भारत में 24 सम्बद्ध महाविद्यालय तथा 35 परीक्षा केन्द्रों में परिव्याप्त यह विश्वविद्यालय ललितकलाओं का गौरव स्तंभ है। यहाँ पी–एच.डी. तथा डी.लिट्. तक शोध–कार्य होते हैं। यहाँ से प्रकाशित उच्चस्तरीय शोध पत्रिकाएँ 'कलासौरभ' 'कला–वैभव' तथा 'लिटरेरी डिस्कोर्स' विश्वविद्यालय के गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा के दर्पण हैं। यहां ललित कलाओं के सृजक–चित्रकार, मूर्तिकार, वास्तुकार, संगीतकार और काव्यकार सभी नवीन उद्भावनाओं को मूर्तरूप देने के प्रयास में संलग्न हैं।

ललितकलाओं की दृष्टि से यहाँ का ग्रंथालय भारतवर्ष में प्रथम है, जो पैंतालिस हजार से अधिक पुस्तकें, ऑडियो (श्रव्यताफोन, अभिलेख) और सी.डी., भारतीय चित्रकारों की विडियो स्लाइड्स, लोक एवं जनजातीय कलाकारों के कला नमूनों के उल्लेखनीय संग्रह से सुसज्जित है। ग्रंथालय में भव्य श्रव्यकक्ष है, जहाँ विद्यार्थी, शोधार्थी तथा कला–जिज्ञासु अपने विषय के अनुरूप महान कलाकारों के ऑडियो–विडियो कैसेट्स द्वारा ज्ञान अर्जन करते हैं। विश्वविद्यालय के संग्रहालय में कलात्मक अवशेषों का विपुल संग्रह है, जो देश के इस हिस्से की बहुविध समृद्ध संस्कृति को प्रदर्शित करता है। शास्त्रीय एवं लोकसंगीत के वाद्यों की कलावीथिका भी मनोहारी है। विश्वविद्यालय का शिक्षण तथा प्रशासनिक कार्य दो परिसरों में संपन्न होता है।

छत्तीसगढ़ का प्रथम तथा भव्य आडिटोरियम विश्वविद्यालय में ही स्थित है। अत्याधुनिक संसाधनों से युक्त 'रिकार्डिंग रूम' तथा 'लैंग्वेज लैब' की अपनी विशिष्टता है। हाइटेक कम्प्यूटर सेंटर तथा योग केंद्र की भी महती भूमिका है। देशी–विदेशी विद्यार्थियों, शोधार्थियों के लिए सुविधायुक्त कई महिला एवं पुरुष छात्रावास हैं। साथ ही बाहर से आने वाले अतिथियों के ठहरने के लिए अतिथिगृह की भी उत्तम व्यवस्था है। इतना ही नहीं, यहाँ का हरा–भरा परिसर कलासाधकों की साधना के लिए अनुकूल वातावरण निर्मित करता है।

इस उत्सवधर्मी विश्वविद्यालय में वर्षभर राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ, कार्यशालाएँ, उत्सव, प्रदर्शनियाँ आयोजित होती हैं। देश–विदेश के ख्यातिलब्ध कलाकार, साहित्यकार, नाटककार इस कलातीर्थ में आकर गौरव का अनुभव करते हैं। महान नृत्य गुरु पं. लच्छू महाराज, संगीत मर्मज्ञ ठाकुर जयदेव सिंह, प्रसिद्ध नृत्यांगना सितारा देवी, विश्व प्रसिद्ध सितार वादक पं. रविशंकर, भारत रत्न लता मंगेशकर, छत्तीसगढ़ माटी के विश्वविख्यात रंग निदेशक हबीब तनवीर, प्रख्यात कला विदुषी डॉ. कपिला वात्स्यायन, चित्रकला के पुरोधा सैयद हैदर रज़ा, विश्व प्रसिद्ध कलाकार जोहरा सहगल सदृश अनेक विभूतियाँ इस विश्वविद्यालय में मानद डी. लिट्. से सम्मानित हुई हैं।

इस कलातीर्थ में भारत के कई प्रांतों तथा श्रीलंका, पोलैण्ड, थाईलैण्ड, ऑस्ट्रिया, फिज़ी, तुर्की, मॉरिशस, नेपाल, अफगानिस्तान, मलेशिया आदि देशों से विद्यार्थी–शोधार्थी श्रद्धाभाव से आते हैं। अलग–अलग स्थानों से आए, भिन्न–भिन्न संस्कृतियों के विद्यार्थियों के पाठ्यक्रम एवं शोध आवश्यकताओं की अपेक्षाएँ पूरी होती हैं। यहाँ की अनूठी प्रकृति विद्यार्थियों को भारत की समृद्ध पारंपरिक भारतीयता के ज्ञानार्जन की अनुभूति कराती है।

कलाकार को मनोनुकूल परिवेश के लिए ऐसे समाज की तलाश होती है जिससे बेगानेपन का भाव न हो और वह पड़ोस के समुदाय से भावनात्मक रूप से जुड़ सके। महात्मा गाँधी ने 23 नवम्बर 1924 में प्रसिद्ध संगीतज्ञ श्री दिलीपकुमार राय से कला के संबंध में बातें करते हुए कहा था–''कलाकार जब कला को कल्याणकारी बनाएँगे

और जनसाधारण के लिए सुलभ कर देंगे, तभी उस कला को जीवन में स्थान मिलेगा। जब कला लोक की न रहकर थोड़े लोगों की रह जाती है, तब मैं मानता हूँ कि उसका महत्व कम हो गया।''

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की भावना के अनुरूप इस कलातीर्थ के प्रथम कुलपति रातंजनकर हों या प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्रजी या रामकथा गायक व विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. अरुण कुमार सेन हों, अब तक कार्यरत विश्वविद्यालय के समस्त कुलपतियों, शिक्षकों, संगीतकारों व कर्मचारियों ने इसके संरक्षण और संवर्धन में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उत्थान से लेकर अब तक के 20वें कुलपति प्रो. डॉ. माण्डवी सिंह ने ललितकला को समर्पित इस विश्वविद्यालय के विकास में प्रभावी भूमिका का निर्वाह किया है। यहां राज्य सरकार के सहयोग से हर वर्ष 'खैरागढ़ महोत्सव' का भव्य आयोजन होता है जिसमें देश–विदेश के स्वनामधन्य कलाकार अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं। इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय आज प्रदेश का पहला विश्वविद्यालय है जिसे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद् (नेशनल एसेसमेंट एण्ड एक्रीडिटेशन काउंसिल) द्वारा 24 सितम्बर 2014 को विश्वविद्यालय को प्रत्यायित कर 'ए' दर्जा प्राप्त हुआ है। देश के प्रतिष्ठित संस्थान, रिक्रूटमेंट के लिए विश्वविद्यालय आते हैं जिसमें यहाँ के विद्यार्थी चयनित होते हैं। राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार व फैलोशिप प्राप्त शिक्षक, शोधार्थी तथा विद्यार्थी यहाँ की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए क्रियाशील हैं।

यहाँ से दीक्षित कलाकार देश–विदेश में भारतीय कला संस्कृति के ध्वजवाहक बने हुए हैं। क्योंकि कला राष्ट्र के जीवन का एक मुख्य अंग है, उससे ही हमारे जीवन को रस, सुकुमारता और सहृदयता का आहार मिलता है। आज अन्य देशों के लोगों ने अपनी जिस संस्कृति के आधार पर अपने आचार–विचार और समस्त जीवन को कार्यान्वित किया है, उससे वे ऊब रहे हैं, वे भारतीय जीवन की सरलता, मधुरता व उपयोगिता को अपनाने में सुख शांति का अनुभव कर रहे हैं। भारतीय कृतियों में आनंद को समस्त कलाओं का एकमात्र लक्ष्य माना गया है। स्वामी विवेकानंद के अनुसार 'समस्त काव्य, चित्रकला और संगीत, शब्द, रंग और ध्वनि के द्वारा भावना की ही अभिव्यक्ति है।' हमारी अवधारणा में मनुष्य कोई पदार्थ नहीं, पूर्ण चेतन है, जो परमेश्वर का ही सांस्कृतिक प्रतिनिधि माना गया है। यहाँ के कला साधक यही बोध कराने के लिए क्रियाशील हैं। गायन विभाग के पूर्व प्रवक्ता डॉ. अनिता सेन द्वारा रचित एवं स्वरबद्ध विश्वविद्यालय के कुलगीत में भी जनकल्याणकारी भावना प्रतिबिंबित होती है–

प्रतिपल जीवन नव कोणों में, विकसित होता जाए।
धन्य विश्वविद्यालय पावन, स्वर्ग धरा पर लाए।।

इस कलातीर्थ का ध्येय वाक्य है– ''सुस्वराः संतु सर्वेऽपि'' अर्थात् ''सभी सुन्दर स्वर वाले हों।'' कला के पथ पर निरंतर अग्रसर होते हुए हमारी समृद्ध संस्कृति का वाहक यह विश्वविद्यालय अपने ध्येय वाक्य की सार्थकता को सिद्ध कर रहा है।

शब्दार्थ

प्रांजल – खरा; सरल या शुद्ध, ईमानदार, समतल; **संरक्षण** – सहेजना; **संवर्धन** – समुचित रूप से बनना; **आलोकित** – प्रकाशित; **आविर्भाव** – उत्पन्न; **फल लगना** – फूलना; **कला वीथिका** – कला गलियारा; **पुरोधा** – आदिपुरुष।

अभ्यास

पाठ से

1. भारतीय संस्कृति को श्रेष्ठ क्यों माना गया है?
2. पाठ के आधार पर खैरागढ़ राज्य के इतिहास पर प्रकाश डालिए।
3. खैरागढ़ संगीत विश्वविद्यालय की स्थापना किस तरह हुई?
4. विश्वविद्यालय के कुलपति पं. एस.एन. रातंजनकर के योगदान को लिखिए।
5. खैरागढ़ विश्वविद्यालय में कौन–कौन से शिक्षण विषय उपलब्ध हैं?
6. टिप्पणी लिखिए–

   (क) ग्रंथालय (ख) ललितकला
7. इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय को कलातीर्थ क्यों कहा गया है?

पाठ से आगे

BCUEBF

1. कलाएँ हमारे जीवन को किस तरह खुशहाल व परिपूर्ण बनाती हैं?
2. ललितकलाएँ कौन–सी हैं और उन्हें ललितकलाएँ क्यों कहा गया है?
3. कलाकार क्या विशिष्ट व्यक्ति होते हैं या आप और हम भी कलाकार हो सकते हैं? आपस में विचारकर लिखिए।
4. विभिन्न कलाओं की शिक्षा प्राप्त कर आप किस तरह के रोजगार चुन सकते हैं? तालिका में लिखिए–

कला	व्यवसाय के क्षेत्र
उदाहरण– तबला–वादन	तबला वादक, तबला शिक्षक आदि।

5. कला 'स्वांतः सुखाय' भी होती है। कैसे? शिक्षक से पूछकर लिखिए।

भाषा के बारे में

1. 'भावना' स्त्रीलिंग संज्ञा शब्द है इसमें जब 'आत्मक' प्रत्यय जुड़ेगा तो प्राप्त शब्द 'भावनात्मक' एक विशेषण शब्द होगा। इसी प्रकार निम्नांकित शब्दों में 'आत्मक' प्रत्यय जोड़कर विशेषण शब्द बनाइए–

   कला, व्याख्या, तुलना, रचना।

2. निम्नांकित शब्दों में कुछ अन्य शब्द जोड़कर नए शब्द बनाइए– जैसे साहित्य से साहित्य सम्मेलन

   (क) गायन (ख) परंपरा (ग) कला

3. पाठ के चौथे अनुच्छेद में दी गई जानकारी के आधार पर राजा वीरेन्द्र बहादुर और रानी पद्मावती के बीच एक संवाद लिखिए।

4. अपने मित्र को एक पत्र लिखिए जिसमें खैरागढ़ के संगीत विश्वविद्यालय की संक्षिप्त जानकारी दीजिए।

BD4AD3

(क) 'भावनात्मक' शब्द में 'आत्मक' प्रत्यय है ऐसे ही दस शब्द और बनाइए।

(ख) कल्याणकारी शब्द में 'कारी' प्रत्यय 'करने वाला' या करने वाली का बोध कराता है ऐसे ही आप 'कारी' प्रत्यय लगाकर दस नए शब्द बनाइए।

(ग) संस्कृत से मूल रूप में बिना परिवर्तित हुए हिंदी में लिए गए शब्दों को तत्सम शब्द कहते हैं। जैसे– कर्ण, अग्नि, इत्यादि। इस पाठ में आए तत्सम शब्दों की सूची बनाइए।

योग्यता विस्तार

1. संगीत में कितने स्वर होते हैं, उनके क्या–क्या नाम हैं पता लगाकर लिखिए।
2. पता लगाकर लिखिए कि एक गायक अन्य भाषा के गीतों को किस प्रकार आसानी से गा लेता है?
3. छत्तीसगढ़ के प्रसिद्ध शास्त्रीय गायकों एवं लोकगायकों की सूची बनाकर उनकी गायन शैली/विधा लिखिए।
4. रायगढ़ के चक्रधर समारोह के बारे में जानकारी एकत्र कीजिए और शाला की भित्ति पत्रिका में लगाइए।

BDD6EQ